

पद ९०

(राग: पिलु - ताल: धुमाळी)

अरे अरे तूं या जर्गीं रहिवासी, सुखवासी। जीवा सोडी तूं अहंता
ही रे फांशी ॥ ध्रु. ॥ जीवा रे जन्मदुःख जरी आठव करिसी।
योनिमुखीं मलमूत्र भक्षिसी। प्राण रोधुनी बहु तळमळसी। मग
तिथें जगदीशा स्मरसी। बहु दीनवाणी भाकिसी। बाहेर पडतां
निज माता पिता मुख पाहुनि त्वरित मग जगदीशा भुलसी ॥ १ ॥

जीवा रे धनमदगर्व सुखांत लुब्धसी अस्थिमांसमय स्त्रिया पहासी।
चंद्रमुखी ग तूं अतिप्रिय म्हणसी। मरणसमय संकट नाठविसी।
दुर्मिळ वय हें घालविसी। यमसदनांतुनि मुक्त न होसी। जरि पतित
निज बहु कष्ट योनि तूं पावसी ॥ २ ॥ जीवा रे कोण मी कैंचा कोठुनी
आलों। किति जन्म भवदुःख सोशिलों। मनुष्य जन्म असार्थक
केलों। या उपदेशा मानिसी। ज्ञानरूप मार्तांड प्रतापें, पूर्ण बोध
अतितर घन निजसुख भोगिसी ॥ ३ ॥